का यह वर्णन है, **तद्विष्णोः परमं पदम्।** एक दृष्टि से तो सब प्राकृत पदार्थ भी दिव्य ही हैं, क्योंकि सभी कुछ श्रीभगवान् के राज्य में स्थित है; परन्तु **परमं पदम्** विशेष रूप से दिव्य वैकुण्ठ-जगत् का वाचक है।

पन्द्रहवें अध्याय में कहा है, **सर्वस्य चाहं हृदि संनिविष्ट,** श्रीभगवान् सब के हृदय में बैठे हैं। अतः अन्तर्यामी परमात्मा के शरणागत होने की इस आज्ञा का तात्पर्य यही है कि भगवान् श्रीकृष्ण के शरणागत हो जाना चाहिए। अर्जुन ने श्रीकृष्ण को परब्रह्म कहा है। दसवें अध्याय में उसके वचन हैं, **परं ब्रह्म परं धाम।** वह स्वीकार करता है कि श्रीकृष्ण परब्रह्म, स्वयं भगवान् एवं जीवों के परम आश्रय हैं। वह यह केवल अपने निजी अनुभव के आधार पर कहता हो, ऐसा नहीं; नारद, असित, देवल, व्यास आदि सभी महान् आचार्य इसके प्रमाण हैं।

इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद्गुह्यतरं मया।
विमृश्यैतदशेषेण यथेच्छसि तथा कुरु।।६३।।

इति=इस प्रकार (यह); **ते**=तेरे लिए; **ज्ञानम्**=गीताशास्त्ररूप ज्ञान; **आख्यातम्**=कहा है; **गुह्यात्**=गोपनीय से भी; **गुह्यतरम्**=परम गोपनीय; **मया**=मेरे द्वारा; **विमृश्य**=भलीभाँति मनन करके; **एतत्**=इसे; **अशेषेण**=पूर्णरूप से; **यथा**=जैसा (तू); **इच्छसि**=चाहे; **तथा**=वैसा; **कुरु**=कर।

अनुवाद

इस प्रकार यह परम गोपनीय ज्ञान मैंने तेरे लिए कहा है। अब इस गीताशास्त्र पर पूर्णरूप से विचार करके फिर जैसी तेरी इच्छा हो वैसा कर।।६३।।

तात्पर्य

श्रीभगवान् अर्जुन को ब्रह्मभूत-ज्ञान का वर्णन सुना चुके हैं। ब्रह्मभूत पुरुष प्रसन्नावस्था में रहता है; न कभी शोक करता है और न कभी कोई इच्छा ही करता है। यह गोपनीय ज्ञान का परिणाम है। श्रीकृष्ण ने परमात्मा का ज्ञान भी सुनाया है। परमात्मा के ज्ञान में ब्रह्मज्ञान का भी समावेश रहता है; अतः यह केवल ब्रह्मज्ञान से उत्तम है।

अब श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि उसकी जैसी इच्छा हो, वही करे। जीव को जो अणुमात्र स्वतन्त्रता है, श्रीभगवान् उसमें हस्तक्षेप नहीं करते। भगवद्गीता में उन्होंने स्वयं उस पद्धति का पूर्ण निरूपण किया है, जिससे जीव की जीवन-अवस्था का उत्थान हो सकता है। अर्जुन को सर्वोत्तम परामर्श यही है कि अपने अन्तर्यामी परमात्मा के शरणागत हो जाय। जीव को सच्चे विवेक से परमात्मा की आज्ञा के अनुसार कर्म करने को तत्पर हो जाना चाहिए। यह नित्य-निरन्तर कृष्णभावनाभावित रहने में बड़ा सहायक होगा, जो मानवजीवन की चरमसिद्धि है। अर्जुन को तो साक्षात् श्रीभगवान् युद्ध करने का आदेश दे रहे हैं। श्रीभगवान् की शरण में जाना जीव का अपना परम स्वार्थ है, इसमें परमेश्वर का कोई स्वार्थ नहीं है।